International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

अठारहवीं शताब्दी में हाड़ौती क्षेत्र के राजनितिक परिदृश्य का आलोचनात्मक अध्ययन

..... नरेश कुमार (शोधार्थी, इतिहास विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय रोहतक)

सारांश (Abstract) **:-**

भारतीय इतिहास में अठारहवीं शताब्दी का काल एक बहुत ही महत्वपूर्ण, जीवंत और कँपकँपी सी पैदा कर देने वाला विषय है जो अपने विरोधाभासितापूर्ण चरित्र को लेकर लम्बे समय से इतिहासकारों के बीच विवाद का विषय बना हुआ है। महान मुगल साम्राज्य जो लगभग 150 वर्षों से सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप पर प्रभावशाली ढंग से अपना नियन्त्रण स्थापित किए हुए था, का पतन अथवा राजनीतिक बिखराव इस शताब्दी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना है। इस प्रकार इन परिस्थितियों में अठारहवीं शताब्दी के राजनितिक परिदृश्य का आलोचनात्मक अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण विषय हो जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में अठारहवीं शताब्दी में राजस्थान के हाड़ौती प्रदेश के राजनितिक परिदृश्य को समझने का प्रयास किया गया है।

संकेत शब्द (Keywords**):-** राजस्थान, हाड़ौती, बूंदी, सपालदक्ष, साँचोर, जालोर

राजस्थान का दक्षिण–पूर्वी भाग ***हाडौती*** के नाम से जाना जाता है जहाँ पहले मीणाओं का अधिकार था। यह प्रदेश शाकम्भरी चौहानों की एक शाखा द्वारा शासित था।[1] सपालदक्ष क्षेत्र जिसको शाकम्भरी अथवा साँभर के नाम से भी जाना जाता था छठी शताब्दी ई० में चौहान वंश की सत्ता का अभिकेन्द्र था। यह प्रदेश जंगलदेश के नाम से भी जाना जाता था। वासुदेव इस सपालदक्ष क्षेत्र का प्रथम शासक था।
वासुदेव ने 608 वि०सं० (1551 ई०) के आसपास इस क्षेत्र में शासन किया।[2] वाकपतिराज प्रथम भी शाकम्भरी प्रदेश का एक प्रमुख शासक था। पृथ्वीराज विजय में उसकी 188 विजयों का उल्लेख प्राप्त होता है। वाकपति राज ने राष्ट्रकूटों को पराजित करके अपनी सीमाओं का विस्तार विंध्य पर्वत श्रृंखला तक कर लिया था।[3]

वाकपतिराज के बाद विंध्यराज गद्दी पर बैठा जो केवल एक नाममात्र का शासक सिद्ध हुआ। विंध्यराज के बाद सिंहराज ने गद्दी प्राप्त की किन्तु शीघ्र ही अपने शत्रुओं से पराजित हो गया। इसके शासनकाल में ही चौहानों को अस्थायी रूप से शाकम्भरी के क्षेत्र से हाथ धोना पड़ा।[4]

इसी समय सिंहराज के भाई और वाकपतिराज के पुत्र लक्ष्मणसेन ने गोडवार की ओर कदम बढ़ाए और वि०सं० 1000 (943 ई०) में नाडोल राज्य (रियासत) की स्थापना की।[5] चौहान लगभग 200 वर्षों तक शान्तिपूर्वक नाडोल पर शासन करते रहे, किन्तु कुतुबुद्दीन ऐबक के नाडोल पर आक्रमण और अधिकार कर लेने के बाद चौहानों को साँचोर और जालोर आदि प्रदेशों में विस्थापित होना पड़ा। इसी समय नाडोल शाखा के ही मानिक राय द्वितीय ने मेवाड़ के दक्षिण–पूर्वी क्षेत्र में एक नये चौहान राज्य की स्थापना की और बंबवदा को अपनी राजधानी बनाया।

इसी मानिक राय द्वितीय के वंश में हरराज़ और हाड़ा राओ नाम का शासक हुआ जिसके वंश डाड़ा के नाम से जाने गए[6] और हाड़ा शासकों द्वारा शासित प्रदेश को हाड़ावती अथवा हाड़ौती के नाम से जाना गया। इसी वंश में राव बंगदेव नामक शासक हुआ, जिसके काल में इस राज्य की सीमाओं का खूब विस्तार हुआ। मेवाड़ राज्य की राजनीतिक अस्थिरता ने इस राज्य की सीमाओं के विस्तार में और भी अधिक सहायता की।

राव बंगदेव के बाद राव देवा अथवा देवी सिंह सिंहासन पर बैठा जो कि सिंकदर लोदी का समकालीन था। कालान्तर में बंगदेव ने बंबवदा का क्षेत्र अपने पुत्र हरराज को सौंप दिया और स्वयं बंदोनाल (वर्तमान बूंदी शहर का क्षेत्र) की ओर कूच कर गया।

इस समय इस क्षेत्र पर मीणाओं का अधिकार था और वहाँ जैता मीणा शासन कर रहा था। हाड़ा शासकों द्वारा इस क्षेत्र पर अधिकार का प्रयास हाड़ा और मीणाओं के मध्य संघर्ष का कारण बना। अपनी शक्ति और प्रभुत्व को सिद्ध करने के लिए जैता मीणा अपने पुत्र के लिए राव देवा से उसकी पुत्री की माँग की। राव देवा ने कूटनीति का इस्तेमाल करते हुए जैता मीणा के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। विवाह के दिन रावदेव ने विश्वासघात किया और छलपूर्वक जैया मीणा और उसके मीणाओं की हत्या कर दी। इस विजय की स्मृति में बंदो नाल में बूँदी के किले का निर्माण किया गया।

मुँहणोत नैंसी ने इससे अलग एक दूसरी ही विवरण प्रस्तुत किया है। नैंसी के अनुसार जब हाड़ा शासकों का बूँदी में आगमन हुआ तो उस समय बूँदी पर मीणाओं का अधिकार था और मीणाओं ने अपनी शक्ति के नशे में अंधा होकर बूँदी मे रह रहे ब्राह्मणों, जो कि अपने को मीणाओं से श्रेष्ठ समझते थे, से उनकी कन्याओं की माँग की। इस आपात स्थिति में इन ब्राह्मणों ने रावदेवा से सहायता की माँग की। राव देवा ने चाल चलते हुए ब्राह्मणों को आदेश दिया कि वो जैता मीणा का प्रस्ताव स्वीकार कर

लें। विवाह के दिन जहाँ मीणाओं को ठहराया गया था वहाँ पहले से बारुद बिछाया गया था। जब मीणा शराब के नशे में चूर हो गए तो धमाका किया गया और जैता मीणा समेत अनेक मीणाओं की हत्या कर दी गई।

इस प्रकार बूँदी पर हाड़ा शासकों का अधिकार हो गया। वो मीणा जो भागने में सफल रहे वो पड़ोसी राज्य में जा बसे और बाद में इनको बुंदेलों के नाम से जाना गया। नैंसी के अनुसार चौहानों की 24 शाखाएँ थी, जिसमें से एक का नेतृत्व राव लखन कर रहा था। इसी राव लखन के वंशज हाड़ा के नाम से प्रसिद्ध हुए और इन्हीं वंशजों ने हाड़ौती पर शासन किया।[7]

नैंसी की ख्यात में वर्णित एक अन्य वृतान्त के अनुसार राव देवा दिवालिया हो गया और उसे बूँदी को छोड़ना पड़ा। तब राव देवा ने मेवाड़ से सहायता माँगी। मेवाड़ के शासकों से प्राप्त सैनिक शक्ति के बल पर मीणाओं को पराजित कर दिया और हाड़ौती पर अधिकार कर लिया।[8]

राव देवा ने गौड़ राजपूत शासकों द्वारा शासित खानपुर, गनोली, लखेरी और पाटन जैसी रियासतों को जीतकर बूँदी राज्य का विस्तार किया।[9]

बंबवदा राज्य को भी बूँदी में मिला लिया गया। इस प्रकार राव देवा ने लम्बे समय तक सफलतापूर्वक बूँदी राज्य की सीमाओं की शत्रुओं से रक्षा की। वि०स० 1400 (1343 ई०) में राव देवा ने अपने पुत्र समर सिंह के लिए गद्दी छोड़ दी और साधू बन गया।[10]

समर सिंह के काल में बूँदी राज्य का विस्तार मुकन्दरा पर्वत श्रेणी के दक्षिण–पश्चिम भाग में भीलों द्वारा शासित प्रदेश तक हो गया। जब बूँदी राज्य की सीमाएँ चम्बल नदी तक आ पहुँची तो ये भील उपद्रव करने लगे और बूँदी–राज्य की शान्ति को भंग करने लगे। इसलिए समरसिंह को चम्बल नदी पार करके इन लोगों के उपद्रव को शान्त करना पड़ा।[11] समरसिंह भीलों का दमन करके ही संतुष्ट नहीं हुआ बल्कि अपने राज्य को और भी अधिक विस्तृत करने के लिए कैथून, सीसवाली, बड़ौद, रैलावन, रामगढ़, मऊ और संगोद आदि स्थान गौड़, पँवार तथा मेद आदि राजपूतों से छीनकर अपने राज्य में मिला लिए।[12]

इसी समय अकेलगढ़ के पास कोट्या भील का शासन था। कोट्या भील से समरसिंह का कई बार टकराव हुआ। समरसिंह को पराजित करने में समर सिंह के पुत्र जैतसी (जैत सिंह) ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भीलों को नष्ट करने के लिए जैत सिंह ने उन्हीं उपायों का प्रयोग किया, जिनके द्वारा देवीसिंह ने मीणाओं से बूँदी छीनी थी। एक बाड़ा बनाकर उसके नीचे बारुद भरा गया और भीलों को दावत के लिए आमन्त्रित

किया गया। भीलों को इसी बाड़े में बैठाकर मद्यपान करवाया गया और बाड़े में आग लगा दी गई। इस प्रकार अकेलगढ़ के भीलों को मारकर जैतसिंह ने कोटा पर अधिकार कर लिया।[13]

समरसिंह के बाद उसका पुत्र नापूजी बूँदी की गद्दी पर बैठा और जैतसिंह कोटा में शासन करता रहा। नापूजी ने अपने पिता की विस्तारवादी नीति को जारी रखा और महेश दास को पराजित करके पलायथे के किले पर अधिकार कर लिया।[14]

नापू के बाद हम्मीर सिंह और उसके बाद बारसिंह गद्दी पर बैठे, परन्तु दोनों ने थोड़े समय ही शासन किया और फिर हल्लू को राजसिंहासन प्राप्त हुआ। हल्लू के शासनकाल में सीसवाली के नवाधिकृत सामन्त ने विद्रोह कर दिया जिसको हल्लू ने सफलतापूर्वक दबा दिया।[15]

इस समय बूँदी को अपने राज्य में शान्ति स्थापित करने और शत्रुओं के आक्रमणों को रोकने के लिए लम्बा संघर्ष करना पड़ा। सीसवाली, बड़ौद, रामगढ़, कैथून पलायथा आदि प्रदेश कुछ ही वर्ष पहले बूँदी में मिलाए गए थे और यहाँ के शासक निरन्तर रूप से स्वतन्त्र होने का प्रयास कर रहे थे। उधर दूसरी ओर चित्तौड़ भी बम्बावदे पर आँख गड़ाए बैठा था।[16]

अलाउद्दीन की मृत्यु के बाद मेवाड़ के महाराणा भी निरंतर राज्य विस्तार के लिए संघर्षशील थे और उन्होंने शीघ्र ही बम्बावदा और मॉडलगढ़ पर अधिकार कर लिया। हाड़ा शासक इन प्रदेशों पर अपने वंशानुगत अधिकार का दावा करते थे और इनको अपनी पैतृक भूमि समझते थे। अतः इन प्रदेशों की प्राप्ति के लिए उन्होंने निरन्तर मेवाड़ से संघर्ष जारी रखा। इन युद्धों के परिणामस्वरूप बम्बावदा और माँडलगढ़ कभी हाडों के अधिकार में आ जाते थे तो कभी मेवाड़ के अधिकार में।[17]

जैतसिंह के पश्चात् उसका लड़का सुर्जन सिंह कोटा में राज्य करने लगा। सर्जुन सिंह के पुत्र धीर देव ने कोटा के आसपास वि०स० 1403 (1346 ई०) में 12 तालाबों का निर्माण करवाया।[18] ये तालाब वर्तमान समय में ही उपस्थित हैं और पानी के ये हौज अब 'किशोर सागर' के नाम से जाने जाते हैं।[19]

इस प्रकार लम्बे समय तक बूँदी में राजनीतिक अव्यवस्था व अराजकता का वातावरण बना रहा। वि०स० 1520 (1463 ई०) में बीरू नामक शासक बूँदी की गद्दी पर बैठा। बीरू एक अयोग्य और निर्बल शासक था। बीरू की अयोग्यता का लाभ उठाकर मालवा के सुल्तान ने बूँदी पर आक्रमण कर दिया और भयंकर लूटमार करके

दो बालक राजकुमारों को अपने साथ ले गया और मुसलमान बना लिया। अब इनका नामक समरकंदी और उमरकंदी रखा गया। बीरू के पश्चात् उसका ज्येष्ठ पुत्र बन्दों राजसिंहासन पर बैठा।

अपनी दानशीलता के कारण बन्दों का नाम बूँदी के राजवंश में अमर है, परन्तु वह अधिक समय तक राज्य का उपयोग नहीं कर सका और समरकंदी व उमरकंदी ने मालवा के सुल्तान की सैनिक सहायता से बूँदी पर आक्रमण किया और बूँदी को छीन लिया।[20]

बन्दो का ज्येष्ठ पुत्र नारायण दास अत्यंत वीर और पराक्रमी था। नारायण दास ने फिर से बूँदी पर अधिकार कर लिया और इतना शक्तिशाली बन गया कि जब मालवा के सुल्तान ने उदयपुर पर चढ़ाई की तो उसने महाराणा की बड़ी सहायता की। खानवा के युद्ध में नारायण दास ने राणा साँगा का साथ दिया।[21] राणा साँगा के समय हाड़ाओ ने बूँदी की अधीनता स्वीकार कर ली और कर देना, दरबार में उपस्थित होना व चाकरी करना स्वीकार कर लिया। नारायण दास राणा साँगा के नाम पर माँडू का शासक बनाया गया और सूरजमल को राणा साँगा के अबोध बालक का संरक्षक नियुक्त किया गया।

नारायण दास के बाद उसका पुत्र सूरजमल गद्दी पर बैठा। सूरजमल ने मेवाड़ के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए और अपनी बहन सोजाबाई का विवाह राणा रतन के साथ कर दिया। राणा ने भी अपनी बहन की शादी सूरजमल के साथ कर दी। परन्तु ये विवाह सम्बन्ध भी दोनों के बीच की कड़वाहट को कम नहीं कर पाया और एक युद्ध में लड़ते हुए दोनों वीरगति को प्राप्त हुए।[22]

राव सूरजमल के बाद राव सुर्तन सिंह गद्दी पर बैठा जो कि एक अच्छा प्रशासक और अच्छा सेनानायक था। सुर्तन सिंह के गद्दी पर बैठते ही राजनीतिक अव्यवस्था का लाभ उठाकर अनेक जागीरदारों ने विद्रोह कर दिया। रायमल खीची ने सीसवाली और बरोद पर अधिकार कर स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। अवसर का लाभ उठाते हुए मालवा का सुल्तान भी अपनी सेना लेकर बूँदी पर चढ़ आया। राव सुर्तन सिंह को मजबूर होकर रायमल खीची की जागीर में शरण लेनी पड़ी। किन्तु इसके बावजूद हाड़ाओं ने हार नहीं मानी और किले पर अपना अधिकार बनाए रखा। इसके उपरांत राव निर्बोध सिंह का पुत्र राव अर्जुन बूँदी की गद्दी पर बैठा।

राव अर्जुन के शासनकाल में भी बंबवदा और मंडलगढ़ पर अधिकार को लेकर मेवाड़ और बूँदी में संघर्ष चलता रहा जो उसकी मृत्यु (वि०सं० 1610) तक जारी रहा।[23] राव अर्जुन सिंह के बाद उसका पुत्र राव सुर्जन सिंह गद्दी पर बैठा और इसी

के साथ हाड़ा शासकों और बूँदी राज्य के इतिहास में एक नवीन युग का सूत्रपात हुआ। राव सुर्जन ने हाड़ा शासकों और बूँदी राज्य की खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करने का कार्य किया। राव सुर्जन सिंह ने भदाना के युद्ध में केसर खाँ और डोगर खाँ को पराजित कर पुनः कोटा पर अधिकार स्थापित कर लिया। अद्भुत शौर्य और अभूतपूर्व वीरता का प्रदर्शन करते हुए हाड़ाओं ने कोटा के किले में प्रवेश किया और भीषण नरसंहार के बाद पठानों को वहाँ से मार भगाया। इस प्रकार 26 वर्ष के उपरान्त पुनः कोटा पर बूँदी का अधिकार स्थापित हो गया।[24]

इसके अगले चरण में खीची के प्रमुखों जो सीसवाल और बरोद के शासक बन बैठे थे, को पराजित किया गया और उनकी जागीरों को बूँदी राज्य में मिला लिया गया। इस प्रकार बूँदी राज्य की सीमाएँ बूँदी से रणथम्भौर और कोटा से रामगढ़ तक जा पहुँची। राव सुर्जन के काल में बूँदी का हाड़ा राज्य वैभव और शौर्य की पराकष्ठा पर जा पहुँचा।[25]

मुगल शासकों के अधीन हाड़ौती का इतिहास

इसी समय उत्तर भारत के राजनीतिक परिदृश्य में एक बहुत बड़ा बदलाव आया और मुगल बादशाह अकबर गद्दी पर बैठा। रणथम्भौर का किला अकबर की विशाल सेनाओं के लिए एक आसान सा लक्ष्य प्रतीत हो रहा था। वि०सं० 1617 (1568 ई०) में मुगल सेनाओं ने रणथम्भौर के किले पर घेरा डाल दिया किन्तु वो हाड़ा शासकों को समर्पण के लिए विवश नहीं कर पाए। वि०स० 1618 (1569 ई०) में एक बार फिर से रणथम्भौर का घेरा गया गया किन्तु सफलता हाथ नहीं लगी। अंततः राजा मानसिंह और भगवान दास कछवाहा की मध्यस्थता के बाद राव सुर्जन और मुगलों के बीच सन्धि हो गई और रणथम्भौर के किले पर मुगलों का अधिकार स्थापित हो गया।[26]

शीघ्र ही राव सुर्जन 2000 के मनसब तक पहुँच गया और बूँदी और खटकड़ का इलाका उन्हें वतन जागीर के रूप में प्राप्त हो गया।[27]

बूँदी और खटकड़ वो आरम्भिक प्रदेश थे जिन पर हाड़ाओं ने अधिकार स्थापित किया था। खजुरिया अभिलेख में सूरजमल जिसकी मृत्यु 1531 ई० में हुई थी को बूँदी और खटकड़ का शासक बताया गया है।[28]

राव सुर्जन को शाही सेनाओं के साथ गोंडवाना विजय के लिए भेजा गया जिसमें वह सफल रहा। राव सुर्जन की सेवाओं से प्रसन्न होकर मुगल बादशाह ने उन्हें 'राव राजा' की उपाधि दी और 5000 जात व 5000 सवार का मनसब दिया गया।

इसके अलावा बनारस और चुनार सहित 7 परगने उन्हें जागीर के रूप में प्रदान किए गए। इसके साथ–साथ उन्हें बूँदी के निकट एक विशाल क्षेत्र भी प्रदान किया गया। इस समय कोटा पर राव सुर्जन का पुत्र राव भोज शासन कर रहा था। वि०सं० 1642 (1585 ई०) में राव सुर्जन की मृत्यु हो गई और राव भोज उनका उत्तराधिकारी बना।[29]

राव भोज ने मुगल शासकों के अहमदनगर और गुजरात के विजय अभियानों में भाग लिया। वि०सं० 1664 (1607 ई०) में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र राव रतन गद्दी पर बैठा। जहाँगीर के शासनकाल में बूँदी के शासकों की प्रतिष्ठा और भी अधिक बढ़ी और राव रतन को 'राव राजा' व 'सर बुलन्द राय' की उपाधी देकर 5000 जात व 5000 सवार का मनसबदार बनाया गया।[30]

जब शहजादे खुर्रम ने शाहजहाँ के खिलाफ विद्रोह कर दिया तो राव रतन को अपने पुत्रों माधोसिह व हरि सिंह के साथ महाबत खाँ के अधीन सेना में शामिल होने का आदेश दिया गया। शहजादे खुर्रम के पराजित होने के बाद राव रतन के बुरहानपुर का गवर्नर बनाया गया। शहजादे खुर्रम को हरिसिंह की देखरेख में रखा गया और बाद में यह जिम्मेदारी माधोसिंह को सौंप दी गई। इस दौरान माधोसिंह के राजकुमार के साथ काफी मधुर संबंध स्थापित हो गए जो आगे चलकर हाड़ा राज्य के लिए काफी लाभदायक सिद्ध हुए।

बूँदी राज्य का विभाजन और कोटा राज्य की स्थापना

वि०सं० 1688 (1631 ई०) में बुरहानपुर के निकट एक मुठभेड़ में राव रतन सिंह की मृत्यु हो गई।[31] राव रतन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र राव छत्रसाल गद्दी पर बैठा।

किन्तु इसके साथ–साथ माधो सिंह को बादशाह शाहजहाँ के साथ निकटता के चलते 2500 जात व 2500 सवार का मनसबदार बनाया गया और कोटा का स्वतन्त्र शासक मान लिया गया।[32] इस प्रकार वर्ष 1631 में बूँदी राज्य का विभाजन हो गया और कोटा व बूँदी दो अलग–अलग प्रदेश हाड़ौती क्षेत्र में स्थापित हो गए। राव छत्रसाल को भी विधिवत राव माधोसिंह का उत्तराधिकारी स्वीकार कर लिया गया और उन्हें 3000 जात व 2000 सवार का मनसब देते हुए बूँदी व खटकड़ के इलाके वतन जागीर के रूप में दे दिए गए।[33]

कोटा राज्य की स्थापना बूँदी राज्य के इतिहास में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ और इसने कोटा और बूँदी के बीच शत्रुता और वैमनस्य के बीज बो दिए। वि०सं०

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

1699 के राव छत्रसाल को खिलअत और सम्मानस्वरूप एक घोड़ा प्रदान किया गया क्योंकि दारा शिकोह के साथ कंधार अभिमान में भाग लेते हुए राव छत्रसाल ने अद्भुत वीरता और शौर्य का प्रदर्शन किया। उत्तराधिकार के युद्ध में राव छत्रसाल ने दारा शिकोह की ओर से भाग लिया और रणभूमि में लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ।[34]

कोटा और बूँदी की शत्रुता और बूँदी पर कोटा का अधिकार

पृथक कोटा राज्य की स्थापना के साथ ही दोनों राज्यों के बीच शत्रुता आरम्भ हो गई और कालान्तर में इस संघर्ष में जयपुर के कछवाहे और मेवाड़ के सिसोदिया भी शामिल हो गए।

राव छत्रसाल की मृत्यु के बाद राव भाव सिंह सिंहासन पर आसीन हुआ किन्तु मुगल बादशाह औरंगजेब ने बूँदी शासकों के साथ असंतोष के चलते बहुत से परगने राव भाव सिंह से छीनकर महाराव के छोटे भाई भगवंत सिंह को सौंप दिये। राव भाव सिंह को अपमानित करने के लिए औरंगजेब ने शेओपुर के शासक आत्माराम गौड़ को भड़काया और बूँदी पर अधिकार कर लेने का आदेश दिया।

आत्माराम गौड़ 1200 चुने हुए सैनिकों को लेकर बूँदी की ओर बढ़ा किन्तु हाड़ा शासकों के संयुक्त प्रतिरोध और इन्द्रगढ़ के शासक की सहायता के चलते बूँदी पर अधिकार नहीं कर पाया। हाड़ा शासकों के अभूतपूर्व शौर्य प्रदर्शन से औरंगजेब बहुत प्रभावित हुआ और एक फरमान के द्वारा बूँदी पर राव भाव सिंह के उत्तराधिकार को स्वीकार करते हुए उन्हें राजधानी बुलाकर सम्मानित किया गया। राव भाव सिंह को राजकुमार मुअज्ज़म के साथ औरांगाबाद में नियुक्त किया गया, जहाँ 12 अप्रैल 1681 को उनका देहांत हो गया।[35]

राव भाव सिंह की मृत्यु के बाद अनिरूद्ध सिंह उनके उत्तराधिकारी बने। एक शाही फरमान द्वारा उनको दक्षिण भेजा गया और बाद में काबुल जहाँ वि०सं० 1752 (1695 ई०) में उनकी मृत्यु हो गई। अनिरूद्ध सिंह की मृत्यु के बाद महाराव बुद्ध सिंह उनके उत्तराधिकारी बने। वि०सं० 1764 (1707 ई०) में औरंगजेब की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार के युद्ध में बुद्ध सिंह ने बहादुरशाह का साथ दिया और जाजव के युद्ध में अभूतपूर्व शौर्य का प्रदर्शन कर बहादुरशाह का विश्वासपात्र बन गया।[36] जाजव के युद्ध में कोटा के महाराव रामसिंह राजकुमार आजम की ओर से लड़ते हुए मारे गए। इस घटना ने कोटा और बूँदी के शासकों के मध्य शत्रुता के बीज बो दिए।

शाही तख्त पर बैठने के बाद बहादुरशाह ने अपने मित्रों और सहायकों को पुरस्कृत किया। बुद्धसिंह की वीरता और स्वामीभक्ति से बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ और रामसिंह द्वारा राजकुमार आजम का पक्ष लेने से रुष्ट होकर बहादुरशाह ने बुद्धसिंह को

कोटा पर अधिकार कर लेने का उपदेश दिया।[37] बुद्धसिंह ने जोगीराम के नेतृत्व में एक सेना को कोटा पर अधिकार करने के लिए भेजा किन्तु महाराव रामसिंह के उत्तराधिकारी भीमसिंह ने अद्भुत वीरता और शौर्य का प्रदर्शन करते हुए बूँदी की सेना को पराजित कर दिया।[38]

इसी बीच सवाई जयसिंह के हस्तक्षेप के बाद राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन आया और उन्होंने बुद्धसिंह जी को बूँदी वापिस दिलाने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया। सवाई जयसिंह ने फर्रुखसियर को बुद्ध सिंह की स्वामीभक्ति का विश्वास दिलाते हुए आश्वासन दिया कि जब भी बादशाह फरमान भेजेंगे तो बुद्धसिंह तत्काल दरबार में उपस्थित होगा। सवाई जयसिंह की बात मानकर फर्रुखसियर ने बुद्धसिंह को वापिस बूँदी दिलाने का निश्चय कर लिया और दिलावर खाँ के नेतृत्व में एक सेना भेजकर बूँदी पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार बूँदी को मुगल साम्राज्य में मिलाकर बुद्धसिंह को सौंप दिया गया।[39]

साम्राज्य का पतन और मराठों का आगमन

अठारवीं शताब्दी मुगल साम्राज्य के विघटन और राजस्थान के राजनीतिक परिदृश्य में मराठों के उदय की साक्षी है। मुगल दरबार की गुटबंदी और नई राजनीतिक शक्तियों के उदय ने राजस्थान की राजपूत रियासतों के लिए एक नवीन राजनीतिक वातावरण का निर्माण किया। औरंगजेब की मृत्यु के बाद कोटा और बूँदी के निरंतर संघर्ष के बीच अपने पैतृक राज्य पर दावा बरकरार रखने की आवश्यकता ने भीमसिंह को मुगल दरबार के एक अग्रणी गुट से जुड़ने के लिए बाध्य कर दिया।

फर्रुखसियर के गद्दी पर बैठने के बाद राजनैतिक स्थिति ने पलटा खाया और सैय्यद बंधुओं की सहायता से भीमसिंह ने बूँदी पर अधिकार कर लिया।[40] भीमसिंह के उपरान्त उसका पुत्र अर्जुन सिंह गद्दी पर बैठा। सैय्यद बंधुओं के पतन के बाद कोटा राज्य की शक्ति को भी गहरा आघात पहुँचा किन्तु उसके बावजूद अर्जुन सिंह एकलेरा, मनोहरथाना और पाटन जैसे प्रदेशों पर अधिकार स्थापित करने में सफल रहा। वि०सं० 1780 (1723 ई०) में अर्जुन सिंह की मृत्यु के बाद उसका भाई दुर्जन साल गद्दी पर बैठा।

सैय्यद बंधुओं के पतन के बाद सवाई जयसिंह राजपूताने की राजनीति में एक मुख्य शक्ति बनकर उभरा और वह लगातार कोटा और बूँदी के आंतरिक मामलों में

हस्तक्षेप करने लगा। वि०सं० 1856 में जयप्पा सिंधिया के नेतृत्व में मराठा सेना ने कोटा पर आक्रमण कर दिया और शहर पर अधिकार कर लिया। इस युद्ध में सिंधिया भी गम्भीर रूप से घायल हो गया। अंत में दोनों पक्षों के मध्य सन्धि हो गई और कोटा के महाराव ने युद्ध में हर्जाने के तौर पर 40,000 रूपये देना स्वीकार कर लिया। इसके अलावा पाटन सहित 2 परगने भी मराठों के अधिकार क्षेत्र में आ गए। वि०सं० 1813 (1756 ई०) में दुर्जनसाल की मृत्यु हो गई।[41]

दुर्जनसालन के बाद अर्जुन सिंह सिंहासन पर बैठा किन्तु 2 वर्ष उपरांत ही उसकी मृत्यु हो गई। अर्जुन सिंह की मृत्यु के बाद राव छत्रसाल गद्दी पर बैठा जिनकी आयु केवल 15 वर्ष थी। छत्रसाल के शासनकाल में झाला जालिम सिंह को कोटा का फौजदार नियुक्त किया गया। जालिम सिंह का शासनकाल कोटा और जयपुर के बीच निरंतर शत्रुता का साक्षी रहा और जालिम सिंह ने अपनी वीरता और कूटनीति के बल पर कोटा राज्य की संप्रभूता और अन्य हितों पर कोई आंच नहीं आने दी। जालिम सिंह के काल में कोटा कछवाहा शासकों के आक्रमण से पूरी तरह सुरक्षित बना रहा। वि०सं० 1821 (1764 ई०) में राव छत्रसाल की मृत्यु हो गई।[42]

राव छत्रसाल के उपरान्त राव गुमान सिंह गद्दी पर बैठा जो कि एक योग्य शासक था। राव गुमान सिंह के आरम्भिक काल में जालिम सिंह का प्रशासन पर प्रभाव बना रहा किन्तु शीघ्र ही महाराव गुमान सिंह और फौजदार जालिम सिंह के बीच मतभेद उत्पन्न हो गए। इस मतभेद की समाप्ति जालिम सिंह की जागीर छीन लेने के साथ हुई इस अपमान के बाद जालिम सिंह ने हाड़ौती को छोड़ दिया और राव अरी सिंह को दरबार में नौकरी कर ली। राव अरी सिंह के दरबार में भी जालिम सिंह का विशेष सम्मान हुआ और उन्हें उपहारस्वरूप चित्तूर खेड़ा की जागीर दी गई।[43] इसी समय मराठों ने उदयपुर पर आक्रमण किया जिसमें महाराणा की पराजय हुई। जालिम सिंह को कुछ अन्य अमीरों के साथ बंदी बना लिया गया किन्तु शीघ्र ही छोड़ दिया गया। इसी बीच जालिम सिंह ने फिर से कोटा राज्य की सेवा में लौटने का निर्णय कर लिया।[44]

मेवाड़ और उदयपुर के अभियान के बाद मराठों ने कोटा राज्य के बाकाहनी (BAKAHANI) परगने पर आक्रमण किया जिसमें 1300 मराठा सैनिक मारे गए। मल्हार राव होल्कर को इस दुखद घटना से गहरा शोक पहुँचा और उसने हाड़ा

शासकों से सन्धि का फैसला लिया। मराठों ने अपने सैनिक अभियान के खर्च के तौर पर 6 लाख रूपये की राशि लेकर कोटा को छोड़ दिया। इसी के साथ जालिम सिंह को दोबारा कोटा का फौजदार नियुक्त किया गया।[45]

गुमान सिंह के बाद उसका अल्पसंख्यक पुत्र उमेद सिंह गद्दी पर बैठा। उमेद सिंह के काल में सारी सत्ता जालिम सिंह और महाराव के सम्बन्धी स्वरूप सिंह के हाथों में आ गई। किन्तु जालिम सिंह ने सत्ता के बँटवारे को स्वीकार नहीं किया और स्वरूप सिंह की हत्या करवा दी। इसके साथ–साथ उन सभी अमीरों को पद से हटा दिया जो जालिम सिंह का विरोध कर रहे थे।[46] इस प्रकार झाला जालिम सिंह निर्बाध रूप से कोटा का स्वामी बन गया। वि०सं० 1847 (1790 ई०) में केलवाड़ा और शाहबाद को जीतकर कोटा राज्य में शामिल कर लिया गया। जालिम सिंह ने लालजी पण्डित और अम्बाजी को सिंधिया के एजेन्ट के रूप में कोटा दरबार में नियुक्त किया। इस प्रकार जालिम सिंह के काल में कोटा में सर्वत्र शाँति का वातावरण बना रहा।

हाडौती प्रदेश पर अंग्रेजों का अधिकार

वि०सं० 1860 (1803 ई०) में मुकुन्दरा दर्रे के निकट जसवंत होल्कर और ईस्ट इंडिया कम्पनी की लड़ाई में जालिम सिंह ने कोयला व पलायथा के जागीरदारों के माध्यम से गुपचुप तरीके से अंग्रेजों की सहायता की और ईस्ट इंडिया कम्पनी की मित्रता प्राप्त कर ली। परन्तु शीघ्र ही हाड़ौती प्रदेश भी कम्पनी की विस्तारवादी नीति का शिकार हो गया और वि०सं० 1874 (1817 ई०) में अन्य राजपूत राज्यों के साथ ही सहायक सन्धि को स्वीकार कर लिया और हाड़ा प्रदेश कम्पनी के अधीन हो गया।[47]

पाद–टिप्पणी

1. राव, नारायण सिंह, रुरल इकॉनोमी एण्ड सोसायटी : स्टडी ऑफ साउथ इस्टर्न राजस्थान ड्यूरिंग द एटिंथ सेंचुरी, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2002, पृ० 25
2. शर्मा, दशरथ, द अर्ली चौहान डायनेस्टिज, मातीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली, 1975, पृ० 27
3. वही, 1975, पृ० 31
4. राव, नारायण सिंह, पूर्वोक्त, पृ० 25
5. शर्मा, मथुरा लाल, कोटा राज्य का इतिहास, भाग–1, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2008, पृ० 32
6. वही, पृ० 34

7. सांकारिया, बद्रीप्रसाद (सम्पादित), मुहणौत नैंसी री ख्यात, भाग–1, जोधपुर, 1960, पृ० 100–101
8. वही, पृ० 98–99
9. शर्मा, मथुरा लाल, पूर्वोक्त, पृ० 36
10. वही, पृ० 37
11. वही, पृ० 38
12. वही, पृ० 38
13. वही, पृ० 38
14. वही, पृ० 39
15. वही, पृ० 40
16. वही, पृ० 40
17. वही, पृ० 40–41
18. वही, पृ० 41
19. सेठिया, मधुटंडन, राजपूत पॉलीटी : वारीयर्स, पीजेन्टस एण्ड मर्चेन्टस, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ० 32
20. शर्मा, मथुरा लाल, पूर्वोक्त, पृ० 41
21. वही, पृ० 42
22. वही, पृ० 42; टॉड जेम्स, अनाल्स एण्ड एन्टिक्यूटीज ऑफ राजस्थान, वाल्यूम–2, के०एम०एन० पब्लिशर्स, न्यू देहली, 377-78; मुँहणोत नैंसी री ख्यात, भाग–1, पृ० 104–108.
23. टॉड, जेम्स, पूर्वोक्त, भाग–2, पृ० 378–80
24. शर्मा, मथुरा लाल, पूर्वोक्त, पृ० 40–41
25. श्रीवास्तव, आशीर्वादी लाल, द मुगल एम्पायर, आगरा, 1994, पृ० 148
26. श्यामलदास, वीर विनोद, भाग–2, उदयपुर, 1896, पृ० 107–108

27. सुनीता अली जैदी और इनायत अली जैदी ने ''Akbar and His India'' में छपे अपने लेख ''Akbar and the Rajpur Principalities : Integration into Empire'' में साधारण जागीर और वतन जागीर के बीच अंतर पर विस्तारपूर्वक चर्चा की है, पृ० 15–24
28. ओझा, गौरीशंकर हीराचंद, उदयपुर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2015, पृ० 241
29. श्यामलदास, वीर विनोद, भाग–2, पृ० 107–108
30 राव, नारायण सिंह, पूर्वोक्त, पृ० 31
31. शर्मा, मथुरा लाल, पूर्वोक्त, पृ० 63
32. राव, नारायण सिंह, पूर्वोक्त, पृ० 32
33. सेठिया, मधु टंडन, पूर्वोक्त, पृ० 39
34. टॉड, जेम्स, पूर्वोक्त, भाग–2, पृ० 387–89
35. वही, पृ० 389–90
36. वही, पृ० 390
37. शर्मा, मथुरा लाल, पूर्वोक्त, पृ० 146–47
38. वही, पृ० 148
39. वही, पृ० 152
40. वही, पृ० 149–51
41. श्यामलदास, पूर्वोक्त, पृ० 1417
42. टॉड, जेम्स, पूर्वोक्त, पृ० 416–17
43. राव, नारायण सिंह, पूर्वोक्त, पृ० 40
44. वही, पृ० 40
45. टॉड, जेम्स, पूर्वोक्त, पृ० 420–22
46. वही, पृ० 423–25

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

47. श्यामलदास, पूर्वोक्त, पृ० 1420–21